समग्र या छिद्रमयी शिक्षा !

शरण्या सुधाकर, सोनल राजा एवं
विजयलक्ष्मी अय्यर

आजकल के माता-पिताओं से पूछिए कि जब उनके बच्चे बड़े हों तो वे उनको क्या बनता हुआ देखना चाहते हैं। हो सकता है कि कुछ लोग ठीक-ठीक किसी पेशे का नाम बताते हुए उत्तर दें। पारम्परिक डाक्टर या इंजीनियर से लेकर, तथाकथित अधिक 'खुले दिमाग वाले' लोग संगीत कलाकार या खिलाड़ी तक भी चुन सकते हैं! ये माता-पिता जो भी पेशा चुनें, उनमें से अधिकांश की बुनियादी मान्यता यही होगी कि उनके बच्चों की आजीविका ऐसी हो जिसका वे उमंग से अनुसरण करें और जो समुचित आर्थिक आधार भी प्रदान करे। आर्थिक सफलता के लिए क्षमताएँ निर्मित करने के साथ-साथ, वे यह भी चाहेंगे कि उनके बच्चे ऐसे जीवन कौशल विकसित करें जो उनमें एक स्व-बोध को तथा अपने परिवेश के साथ और उसके भीतर सामंजस्यपूर्वक रहने की योग्यताओं को पोषित करे। कुछ ऐसे माता-पिता भी हो सकते हैं जो सब कुछ समाहित करने वाली आकांक्षा रखते हुए, एक हरफनमौला व्यक्ति की कामना करें ! एक ऐसा व्यक्ति जिसके अनोखे विचार हों, सौन्दर्यबोध हो, मानवीय आदर्श और उनका अपने कृत्यों में अनुसरण करने का संकल्प हो। इन माता-पिताओं के लिए, बड़े होने पर उनके बच्चों की आर्थिक सुरक्षा संतुलित शिक्षा का एक सह-उत्पाद और उससे मिलने वाली गारण्टी है। इनमें से कुछ और यह भी मान सकते हैं कि शिक्षा का अर्थ यह सभी कुछ और इससे भी ज्यादा है!

स्कूलों के माध्यम से प्राप्त होने वाली शिक्षा से इन व्यक्तिगत अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को अब समाज की अपेक्षाओं तथा आकांक्षाओं के सामने रखिए। यदि स्कूली शिक्षा से अपेक्षाएँ समाज की इस दृष्टि को प्रतिबिम्बित करती हैं कि वह किस चीज को मूल्य देता है और भविष्य के अपने नागरिकों में विकसित करना चाहता है, तो राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 एक ऐसा दस्तावेज है जिससे हम यह देखने के लिए सहायता ले सकते हैं कि एक देश की तरह हम किस चीज को मूल्य देते हैं। एन.सी.एफ., 2005 के अन्तर्गत सूचीबद्ध किए गए शिक्षा के लक्ष्यों को, विकास के सभी क्षेत्रों जैसे कि भाषागत, संज्ञानात्मक, नैतिक, भावनात्मक, शारीरिक और सामाजिक क्षेत्रों में व्यक्तिगत रूप से दिए गए ध्यान और फिक्र के माध्यम से हर बच्चे की अनोखी अन्तर्निहित सम्भावना का विकास करने के रूप में देखा जा सकता है - एक प्रकार से कहें तो 'समग्र' विकास! एन.सी.एफ. 2005 का लक्ष्य, यह सुनिश्चित करते हुए कि सीखने की प्रक्रिया रटने वाली पद्धतियों से दूर हटे, ज्ञान को स्कूल से बाहर के जीवन से जोड़ना है। यह ऐसी पाठ्यचर्या की, जो पाठ्यपुस्तकों से आगे जाती है और ऐसी परीक्षाओं की जो लचीली होती हैं, अनुशंसा करता है। एन.सी.एफ. 2005 जिस समग्र विकास की बात करता है, वह एक बच्चे के विभिन्न दैनिक अनुभवों का परिणाम होता है और वह किसी विषय या कक्षा तक सीमित नहीं होता। सतत तथा व्यापक मूल्यांकन (सी.सी.ई.), जो समझ और क्रियान्वयन की दृष्टि से अभी अपने प्रारम्भिक चरण में है, परीक्षाओं द्वारा संचालित शिक्षण से दूर हटते हुए एक बच्चे के सर्वांगीण विकास पर दृष्टि रखने की ओर बढ़ने का एक कदम है।

खीर की गुणवत्ता का प्रमाण उसे खाकर देखने से ही मिलता है। इसलिए स्कूलों की प्रक्रियाओं और कार्य-पद्धतियों पर एक करीबी नजर डालने से हमें यह देखने में सहायता मिलना चाहिए कि ये 'बड़े' दार्शनिक विचार, जिनकी अपेक्षा हमारी नीतियों में की जाती है, किस हद तक व्यवहारिक आचरण से मेल खाते हैं। 'आदर्श' कक्षा का उल्लेख करते ही हमारे मन में एकदम करीने से लगी हुई कुर्सियों, शिक्षक की ओर मुँह किए हुए चुपचाप बैठे हुए विद्यार्थियों तथा उनकी ग्राहकता की परवाह किए बगैर कक्षा को व्याख्यान दे रहे शिक्षक की तस्वीर उभरती है। अभी भी देश की ढेरों कक्षाओं में प्रमुख रूप से इसी

तरीके से सीखने-सिखाने की प्रक्रिया चलती है! आरम्भ में ही यह कहना उचित होगा कि जहाँ सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में व्याख्यान या सहायक शिक्षण-कक्षा के महत्व के बारे में कोई विवाद नहीं है, वहीं दूसरी ओर, कक्षा में गतिविधियों के किन्ही भी अन्य स्वरूपों के बिना, इनका विवेकरहित उपयोग गम्भीर चिन्ता का विषय है। यह बच्चों के सीखने को एक अत्यन्त निष्क्रिय गतिविधि मानने वाले दृष्टिकोण को ही प्रचलित करता है। फिर, सीखने को बच्चों द्वारा जानकारी एकत्रित करके अपने दिमागों को भरने और उसे ऐसी परीक्षा में उगल देने का पर्यायवाची मान लिया जाता है, जो बस इसी योग्यता की जाँच करने का प्रयास करती है! ऐसी कक्षाओं में होने वाली प्रक्रियाएँ मानती हैं कि शिक्षक ऐसी जानकारी के धारक होते हैं जिसे विद्यार्थियों को, बिना उनके विवेक के उपयोग या भागीदारी के, हस्तान्तरित किए जाने की जरूरत होती है। इस दृष्टिकोण के ध्यान का केन्द्र असमान रूप से 'क्या', अर्थात विषयवस्तु, की ओर झुका रहता है, जबकि 'किसी को उसे सीखने की आवश्यकता क्यों है' या यह समझना कि 'कोई कैसे सीखता है', पूरी तरह किनारे कर दिए जाते हैं।

सामान्यतया पारम्परिक विषयों जैसे विज्ञान, भाषा, गणित तथा सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम पूर्व-निर्धारित रहता है। इसका निहितार्थ यह है कि एक विद्यार्थी को पूरे अकादमिक वर्ष के दौरान जिस विषयवस्तु तथा जिन क्षमताओं में निपुण बनना है उनका निर्धारण वर्ष के आरम्भ में ही कर लिया जाता है। शिक्षक का लक्ष्य पूरे पाठ्यक्रम को पढ़ाना और विषयवस्तु में विद्यार्थियों की निपुणता की जाँच करने के लिए पहले से तय अन्तरालों पर उनकी परीक्षा लेना होता है। दुर्भाग्य से, विद्यार्थियों से अपने सीखने के प्रमाण के रूप में जिन क्षमताओं का प्रदर्शन करने की अपेक्षा की जाती है वे केवल याददाश्त से उस जानकारी को प्रस्तुत करने तक ही सीमित रह जाती हैं, जो कक्षा में पढ़ाई गई है या जैसी वह पुस्तक में लिखी हुई है। इसे शिक्षक, विद्यार्थियों तथा पालकों के यह जानने के लिए एक संतोषजनक संकेतक माना जाता है कि कितना सीखना सम्पन्न हुआ है। जानकारी को समझने, उपयोग करने, उसका विश्लेषण, मूल्यांकन या निर्माण करने पर शायद ही कभी जोर दिया जाता है। इस प्रक्रिया में जिन अन्य चीजों की उपेक्षा की जाती है, वे तथाकथित 'गैर-संज्ञानात्मक' कौशल होते हैं जिनको विषयवस्तु के आधार पर विद्यार्थियों में विकसित किया जा सकता है, जैसे कि तर्क करना, सहयोग करना, सम्प्रेषण, समस्याओं को हल करना, जिम्मेदारी, लगन, रचनात्मकता, सराहना आदि जो एन.सी.एफ. 2005 के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों के अत्यावश्यक अंग हैं।

यह अवैज्ञानिक परन्तु प्रचलित धारणा इस समस्या को और भी कठिन बनाती है कि बच्चों में तथाकथित 'संज्ञानात्मक' कौशलों का विकास केवल ऐसे विषयों जैसे कि गणित, विज्ञान तथा अन्य अकादमिक विषयों के द्वारा ही किया जा सकता है। जबकि, कम मान्यता दिए जाने वाले 'गैर-संज्ञानात्मक' कौशलों का सम्बन्ध मुख्य रूप से खेल-कूद, संगीत या कला जैसे 'गैर-अकादमिक' विषयों से जोड़ा जाता है। संज्ञानात्मक तथा गैर-संज्ञानात्मक कौशलों में किया जाने वाला यह पारम्परिक भेद केवल सतही प्रतीत होता है क्योंकि कोई भी मानसिक प्रक्रिया, चाहे वह तर्क करना, सहयोग करना या समानुभव करना हो, 'संज्ञान' (जिसे ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी जानकारी हासिल करने और उसे संसाधित करने में शामिल मानसिक गतिविधियों से सम्बन्धित क्षमता के रूप में परिभाषित करती है) से रहित नहीं होती। हालाँकि संज्ञानात्मक तथा गैर-संज्ञानात्मक कौशलों की स्पष्ट परिभाषा का अभाव है, परन्तु कुछ कौशलों के बारे में ऐसी आम सहमति है कि वे किसी एक वर्ग में, दूसरे वर्ग के बजाय, बेहतर ढंग से समाविष्ट होते हैं। उदाहरण के लिए योजना बनाना, समस्याओं को हल करना, नियमों को याद रखना, ये सभी सहयोग की व्यापक गतिविधि के अंग होते हैं, चाहे वह कक्षा में हो या खेल के मैदान पर हो। लेकिन इन कौशलों के उपरोक्त वर्गीकरण के आधार पर, समस्याओं के हल करने तथा नियमों को याद रखने को संज्ञानात्मक कौशलों के वर्ग में रखना अधिक स्वीकार्य होता है, जबकि योजना बनाने तथा सहयोग करने को गैर-संज्ञानात्मक कौशलों के वर्ग में बेहतर ढंग से शुमार होता हुआ माना जाता है।

इसका आशय यह सुझाना नहीं है कि इन कौशलों या क्षमताओं में से प्रत्येक के लिए एक अलग पाठ्यक्रम बनाए जाने की आवश्यकता है। इसके विपरीत, निर्धारित 'विषय-सूची' वाला ऐसा पाठ्यक्रम होना, जिससे विद्यार्थियों

को अकादमिक वर्ष के दौरान परिचित हो जाना चाहिए, ऐसी क्षमताएँ विकसित करने की भावना के खिलाफ होगा। ऐसा कहने के दो कारण हैं। पहला यह कि 'गैर-संज्ञानात्मक' कौशलों के विकास का प्रमाण ऐसे कौशलों के ज्ञान में नहीं बल्कि व्यवहार में उनके सक्रिय उपयोग में निहित होता है। दूसरे, ये कौशल तरल होते हैं, अर्थात कौशल का ज्ञान या उसके प्रदर्शन की योग्यता, दैनिक जीवन में उसके सक्रिय उपयोग की गारण्टी नहीं देता। उदाहरण के लिए, मान लें कि रेखा अकादमिक विषयों में सीमा की मदद करने से सिर्फ इसलिए इनकार कर देती है क्योंकि सीमा एक अलग सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से आती है। रेखा जानती है कि दूसरों की मदद करना वांछनीय है और जिस विषय में उसे सहायता देना है उसमें उसे महारथ हासिल है। लेकिन सामाजिक-आर्थिक अन्तर उसे किसी अन्य वर्ग के व्यक्ति की मदद करने से रोकता है। अधिक 'विषयवस्तु' या चीजों को साझा करने या सहयोग करने की कहानियों से परिचय करवाना शायद वह उपाय नहीं है जो रेखा को सीमा की सहायता करने के लिए प्रेरित करेगा। इसलिए, जैसा कि यह उदाहरण दर्शाता है, किन्हीं वांछनीय गुणों को जानना अपने-आप दैनिक जीवन में उनके व्यवहारिक आचरण को सुनिश्चित नहीं करता। कौशल विभिन्न कारकों जैसे प्रेरणा, परिणाम, तथा सन्दर्भ पर निर्भर करते हुए प्रदर्शित किए जाते हैं। इसलिए एक बार के आकलन द्वारा, चाहे वह पेपर-पेन्सिल वाला टैस्ट हो या परिस्थिति-परीक्षा (सिचुएशन-टैस्ट), गैर-संज्ञानात्मक कौशलों का आकलन करना कठिन है। अत:, किसी बच्चे के 'गैर-संज्ञानात्मक' कौशलों के बारे में निष्कर्षों को कई स्थितियों पर आधारित और कई स्वरूपों में होना चाहिए।

शिक्षा से हमारी राष्ट्रीय आकांक्षाओं को तथा उनको पूरा करने के मार्ग में आने वाली व्यावहारिक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए, शिक्षण की पद्धतियों को बच्चे पर अधिक केन्द्रित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। इनका उद्देश्य बच्चों को अपने साथियों तथा शिक्षकों, दोनों के साथ गतिविधियों में संलग्न करने के द्वारा यह महसूस करवाना है कि वे सीखने की प्रक्रिया का हिस्सा हैं। जहाँ विद्यार्थी और शिक्षक किसी विषय के तथ्यों का अध्ययन करते हैं, वहीं उस विषय को सीखने की प्रक्रिया पर भी समुचित ध्यान दिया जा सकता है। शिक्षा के लक्ष्यों (जैसी कल्पना एन.सी.एफ. 2005 के द्वारा की गई है) को हासिल करने के लिए यह महत्त्वपूर्ण है कि हम, सिर्फ इस पर ध्यान केन्द्रित करने के बजाय कि 'क्या' सीखा जा रहा है, प्रमुख रूप से इस पर ध्यान दें कि बच्चे 'कैसे' सीखते हैं और 'क्यों' किसी चीज को सीखने की आवश्यकता है।

उदाहरण के लिए एक शिक्षिका के बारे में सोचें जो अपने विद्यार्थियों को पृथ्वी के घूर्णन (रोटेशन) तथा परिक्रमण (रिवोल्यूशन) के टॉपिक को सीखने में मदद करती है। वह अपने विद्यार्थियों से यह सोचने को कहती है कि यदि पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमना या सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाना बन्द कर दे तो क्या होगा। फिर सौर-मण्डल के प्रतिरूपों का प्रयोग करते हुए, घूर्णन तथा परिक्रमण के प्रभावों को कृत्रिम रूप से पैदा करने में शिक्षिका विद्यार्थियों की मदद करती है। वह प्रश्न पूछने की रणनीति का इस्तेमाल करते हुए इन क्रियाकलापों की, तथा इस प्रकार की गतियों के या उनकी अनुपस्थिति के, पृथ्वी पर उपस्थित जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव की कल्पना करने में उनकी सहायता करती है। फिर बच्चे इसके बारे में तर्क-वितर्क करते हैं कि इनमें से प्रत्येक परिस्थिति में क्या होगा। शिक्षिका, पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूर्णनों की संख्या या सूर्य के चारों ओर एक चक्कर लगाने की अवधि, जैसे आमतौर पर रटकर सीख लिए जाने वाले तथ्यों के बारे में प्रश्न नहीं पूछती। यह उदाहरण निष्कर्षों तक पहुँचने की प्रक्रिया पर भी उतना ही ध्यान दिया जाना दर्शाता है जितना अन्तिम निष्कर्षों को दिया जाता है। जब विद्यार्थी चिन्तन प्रक्रिया के उच्चतर स्तरों - विषयवस्तु का विश्लेषण और मूल्यांकन करना - में प्रवेश करते हैं तो वे अपने दृष्टिकोणों को सामने रखते हुए, तर्क करते हुए तथा एक-दूसरे को विश्वास दिलाने का प्रयास करते हुए परस्पर साथ काम करते हैं। ये प्रक्रियाएँ, जिन्हें आमतौर पर 'गैर-संज्ञानात्मक' कौशलों के अन्तर्गत समेट दिया जाता है, तर्क करने, समस्याओं को हल करने, रचनात्मक ढंग से सोचने, समझौता करने और सहयोगी बनकर काम करने के कौशलों के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं।

इसी प्रकार, ध्यान तथा निरन्तरता (सामान्य रूप से इन्हें गैर-संज्ञानात्मक कौशलों के अन्तर्गत समेटा जाता है) को परखने के उद्देश्य से विद्यार्थियों का आकलन करने के लिए

एक सन्दर्भ का होना बेहद जरूरी है। यह सन्दर्भ गणित या संगीत की एक कक्षा हो सकती है, और एक शिक्षक इसका निरीक्षण तथा जाँच कर सकता है कि कोई विद्यार्थी गणित के सवाल हल करने के लिए निर्देशों और कार्यविधियों पर, या दूसरी ओर किसी वाद्य को बजाने के लिए निर्देशों तथा तकनीकों पर, ध्यान दे रहा है या नहीं। इसलिए, इस आम धारणा के विपरीत कि खेल-कूद, कला तथा हस्तकला और अन्य 'सह-पाठ्यक्रमीय (को-करीकुलर)' गतिविधियाँ ही वे विशिष्ट क्षेत्र हैं जिनके माध्यम से 'गैर-संज्ञानात्मक' कौशलों का निरीक्षण, आकलन या विकास किया जा सकता है, इन कामों को उस पूरे समय के दौरान किया जा सकता है जो बच्चा स्कूल में बिताता है, चाहे विषय या गतिविधि कोई भी हो।

उपरोक्त उदाहरणों और तर्कों के पीछे उद्देश्य 'गैर-संज्ञानात्मक कौशलों' को उन सभी चीजों, जो एक बच्चा स्कूल में सीखता और करता है, के हिस्से की तरह, न कि उन्हें अलग करके, देखने के लाभ को रेखांकित करना है। जीवन-कौशलों पर एक कोर्स यहाँ और नैतिक मूल्यों की एक कक्षा वहाँ, इस तरह के बिखरे तरीके के बजाय इन कौशलों के बारे में एक समग्र पद्धति अपनाने से शिक्षकों तथा विद्यार्थियों में एक अतिरिक्त विषय को पढ़ाने तथा सीखने की मजबूरी के एहसास को दूर करने में मदद मिलेगी। ऐसी पद्धति न केवल विषयों को परिपूर्णता से सीखने में मददगार होगी, बल्कि शिक्षा के अन्य पहलुओं पर ध्यान देने के द्वारा उसके लक्ष्यों को हासिल करने का बेहतर अवसर भी प्रदान करेगी और इस तरह उसे समग्र बनाएगी!

शरण्या *अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के इंस्टीट्यूट फॉर असेसमेंट एण्ड ऐक्रिडिटेशन में कार्यरत हैं। उसके पहले, उन्होंने मनोविज्ञान तथा विचार कौशलों का शिक्षण किया तथा बंगलौर में विद्या शिल्प ऐकेडमी की स्पेशल ऐजुकेशन इकाई की सहायता भी की। उनसे +91 9008675943 पर सम्पर्क किया जा सकता है।*

सोनल *इस लेख के लिखे जाने के समय अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के इंस्टीट्यूट फॉर असेसमेंट एण्ड ऐक्रिडिटेशन में कार्यरत थीं। इसके पहले उन्होंने एक मनोवैज्ञानिक के रूप में स्कूलों, अस्पतालों और अन्य एनजीओज में काम किया है। वे क्लीनिकल साइकोलॉजी तथा विशेष शिक्षा में प्रशिक्षित हैं और बच्चों, शिक्षकों तथा माता–पिताओं के साथ काम करती रही हैं।*

विजयलक्ष्मी *इंस्टीट्यूट फॉर असेसमेंट एण्ड ऐक्रिडिटेशन टीम (लर्नर असेसमेंट) के सदस्य की तरह जुलाई 2012 से अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ हैं। फाउण्डेशन से जुड़ने से पहले, उन्होंने विशेष शिक्षक, मिडिल स्कूल कैमिस्ट्री शिक्षक और पाठ्यक्रम संयोजक के रूप में स्कूलों में काम किया। उनसे vijayalakshmi.iyer@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।*
अनुवाद *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*